MEANING AND INTERPRETATION OF SANSKRIT POEMS

Dr. Neeraj Kumari
Associate Professor, Sanskrit Department
Thakur Biri Singh Degree College Tundla, Firozabad, India

संस्कृत काव्यों में निहित भाव विवेचना

डॉ नीरज कुमारी

सह . आचार्य, संस्कृत विभाग, ठाकुर बीरी सिंह महाविद्यालय, टूंडला, फिरोजाबाद, भारत

ABSTRACT

The state of both rasa and bhava exist together in poetry. Where there is Bhav, there is the presence of Ras and where there is Ras, Bhav is inevitable and natural. In fact, juice is generated only from Vibhava, experience and adulterous feelings. The feelings which are present in the heart of man from the root and get awakened when the concerned subject is present. Such expressions are called permanent expressions. These feelings transform into the form of happiness and sorrow and create joy and sadness in the human heart.

सारांश

काव्य में रस और भाव दोनों की स्थिति एक साथ विद्यमान रहती है। जहाँ भाव होता है, वहीं रस की उपस्थिति होती है और जहाँ रस होता है, वहाँ भाव का होना अपरिहार्य एवं स्वाभाविक है। वस्तुतः विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव से ही रस उत्पन्न होता है। जो भाव मूलरूप में मनुष्य के हृदय में विद्यमान रहते हैं तथा सम्बन्धित विषय के उपस्थित होने पर जाग्रत हो जाते हैं। ऐसे भाव स्थायी भाव कहलाते हैं। यही भाव सुख–दुःख के रूप में परिणत होकर मानव के हृदय में हर्ष तथा विषाद उत्पन्न करते हैं।

*रस की अभिव्यक्ति में सहायक विभाव दो प्रकार के होते हैं– आलम्बन तथा उद्दीपन। जिसका आलम्बन करके रत्यादि स्थायी भाव की उत्पत्ति होती है, वह **'आलम्बन विभाव'** है और उस रत्यादि स्थायीभाव को उद्दीप्त करने वाली सामग्री 'उद्दीपन विभाव' है। रत्यादि की अनुभूति के पश्चात् **'स्मित'** आदि बाह्य व्यापार अनुभाव हैं। संचारी भाव (व्यभिचारी) उत्पन्न हुये 'रति' आदि स्थायी भाव की पुष्टि करते हैं।*

परिचय

सुख–दुःख आदि भावों के द्वारा सहृदय के चित्त को भावित कर देना **'भाव'** कहलाता है। विभिन्न प्रकार के सुख–दुःख आदि भावों का जीव में वर्णन किया जाता है, उसके द्वारा सहृदय अर्थात् अर्थात् रसानुरागी के हृदय को भावित करना अथवा फैलाना, भाव को उद्‌बोधित करता है।

कवि के मन में विभिन्न प्रकार के भाव समय–समय पर उत्पन्न होते रहते हैं इन भावों में कवि को जिस प्रकार की अनुभूति होती है, उसी प्रकार के रसमय शब्द कवि के अधरों से अनायास ही निकलते हैं। अनुभूति का अर्थ इस प्रकार भी समझा जा सकता है, यथा– अग्नि में ताप और पुष्प में गन्ध है परन्तु इनका रूप, रंग तथा आकार आदि दृष्टिगोचर नहीं होता। किन्तु ताप और गन्ध की अनुभूति होती है। भाव मन में उत्पन्न होने वाले ऐसे विकार हैं जो मानवीय जीवन में अंग स्वरूप होकर उसमें सदा व्याप्त रहते हैं मन में उठी कोई ऐसी तरंग नहीं है जिसमें भाव न हों। भाव प्रत्येक व्यक्ति की अंतरात्मा का एक विशेष धर्म है।

आचार्य भरतानुसार **'भाव'** शब्द की व्युत्पत्ति दो प्रकार से की गयी है–**'भवन्तीति भावः', 'भावयन्तीति भावाः'**। यहाँ द्वितीय व्युत्पत्ति गीतों के सन्दर्भ में अपेक्षित है। जिसका अर्थ है जो काव्यार्थों को भावित करे वह 'भाव' है, रसों को भावित करने के कारण ये भाव कहलाते हैं। काव्य में वर्णित या नाट्य में अभिनीत सुख दुःख आदि सहृदय के चित्त को भावित करते हैं तथा तन्मय करते हैं, भाव कहलाते हैं। भाव के प्रकार निम्नवत् हैं–

विभाव

ज्ञायमानतया तत्र विभावो भावपोषकृत्।
आलम्बनोद्दीपनत्वप्रभेदेन स च द्विधा।।[6]

विभाव वह है जो स्थायी भाव को पुष्ट करता है। वह आलम्बन और उद्‌दीपन के भेद से दो प्रकार का होता है। जो नायक आदि या अभीष्ट देशकाल आदि काव्य के अतिशयोक्ति रूप वर्णन के द्वारा विशिष्ट रूप वाले हो जाने के कारण आलम्बन के रूप में तथा उद्‌दीपन के रूप में जाने जाते हैं, वे विभाव कहलाते हैं।

अनुभाव

अनुभावो विकारस्तु भावसंसूचनात्मकः।[7]

रति आदि भावों को सूचित करने वाला विकार अनुभाव कहलाता है। सामाजिकों को रति तथा शोकादि भाव का अनुभव कराने वाले तथा रस को पुष्ट करने वाले भ्रू विक्षेप सहित कटाक्ष आदि अनुभाव हैं क्योंकि ये अभिनय तथा काव्य में अनुभावित होने वाले रसिकों को साक्षात् अनुभव के कर्म के रूप में अनुभूत होते हैं इसलिये ये रसिकों में अनुभवन या अनुभाव कहलाते हैं।

सात्त्विक भाव

पृथग्भावा भवन्त्यन्येऽनुभावत्वेऽपि सात्त्विकाः।
सत्त्वादेव समुत्पत्तेसृच्च तद्भाव भावनम्।।[8]

*सात्त्विक भाव वे हैं जो अनुभावों के पश्चात् होते हैं तथापि पृथक् रूप से भाव कहलाते हैं, क्योंकि उनकी **'सत्त्व'** से ही उत्पत्ति होती है। 'सत्त्व' का अर्थ है किसी भाव से भावित होना। दूसरे के हृदय में स्थित दुःख और हर्ष की भावना में प्रायः उसी प्रकार के हृदय वाला हो जाना 'सत्त्व' कहलाता है। सत्त्व मन से उत्पन्न होने वाला विशेष धर्म है। वह मन के एकाग्र होने से उत्पन्न होता है। सात्त्विक भाव दूसरे के दुःख में या हर्ष में दुःखी व हर्षित होकर अश्रु एवं रोमांच आदि के द्वारा उत्पन्न किये जाते हैं। उस सत्त्व से उत्पन्न होने के कारण वे (सुख–दुःख) ही भाव वस्तुतः सात्त्विक होते हैं किन्तु उनसे उत्पन्न होने के कारण अश्रु इत्यादि भी सात्त्विक भाव कहलाते हैं।*

स्तम्भप्रलयरोमांचाः स्वेदो वैवर्ण्यवेपथू।
अश्रुवैस्वर्यमित्यष्टौ, स्तम्भोऽस्मिन्निष्क्रियांगता।
प्रलयो नष्टसंज्ञत्वम्, शेषाः सुव्यक्तलक्षणाः।।[9]

*सात्त्विक भाव के आठ प्रकार हैं, यथा–**स्तम्भ, प्रलय, रोमांच, स्वेद, वैवर्ण्य (रंग फीका पड़ जाना) वेपथु (कम्पन), अश्रु तथा वस्वर्य (स्वरभंग, आवाज बदल जाना)।***

इनमें अंगों का क्रिया रहित (निष्क्रिय) हो जाना स्तम्भ है, चेतना का नष्ट हो जाना प्रलय है।

व्यभिचारी भाव

विशेषादाभिमुख्येन चरन्ती व्यभिचारिणः।

स्थायन्युिन्मग्ननिर्मग्नाः कल्लोला इव वारिधौ।।[10]

विविध प्रकार से स्थायी भाव के अनुकूल चलने वाले भाव व्यभिचारी भाव कहलाते हैं, जो स्थायी भाव में सागर की तरंगों के समान विलीन होते हैं। भाव यह कि सागर में लहरों के समान स्थायी भाव में उत्पन्न होकर तथा विलीन होकर जो निर्वेद आदि भाव रति आदि स्थायी भाव को विविध प्रकार से पुष्ट करते हैं, उसे रसरूपता की ओर ले जाते हैं, वे व्यभिचारी भाव कहलाते हैं।

निर्वेदग्लानिशंकाश्रमधृतिजडताहृर्षदैव्यौग्रयचिन्ता।

स्त्रासेष्यीमर्षगर्वाः स्मृतिमरणमदाः सुप्तनिद्राविबोधाः।।

व्रीडापस्मारमोहाः सुमतिरलसतावेगतर्काविहत्था।

व्याध्युन्मादौ विषादोत्सुकचपलयुतास्त्रिंशदेत त्रयश्च।।[11]

व्यभिचारी भाव के तैंतीस प्रकार हैं– निर्वेद, लानि, शंका, श्रम, धृति, जड़ता, हर्ष, दैन्य, औग्रय, चिन्ता, त्रास, ईर्ष्या, अमर्ष, गर्व, स्मृति, मरण, मद, सुप्त, निद्रा, विबोध, व्रीडा, अपस्मार, मोह, सुमति, अलसता, वेग, तर्क, अवहित्था, व्याधि, उन्माद, विषाद, औत्सुक्य तथा चपलता।

स्थायी भाव

विरुद्धैरविरुद्धैर्वा भावैर्विच्छिद्यते न यः।

आत्मभावं नयत्यन्यान् स स्थायी लवणाकरः।।[12]

जो रति आदि भाव अपने से प्रतिकूल अथवा अनुकूल किसी प्रकार के भावों के द्वारा विच्छिन्न नहीं होता और लवणाकार (नमक की खान या समुद्र) के समान अन्य सभी भावों को आत्मसात् कर लेता है, वह स्थायी भाव कहलाता है। स्थायी भाव इन्हें इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये स्थित रहने वाले हैं और प्रधान भी होते हैं।

रत्युत्साहजुगुप्सा क्रोधो हासः स्मयो भयं शोकः।

शममपि केचित्प्राहुः पुष्टिर्नाटयेषु नैतस्य।।[13]

*स्थायी भाव के नौ प्रकार माने गये हैं, यथा–**रति, उत्साह, जुगुप्सा, क्रोध, हास, विस्मय, भय, तथा शोक**। कुछ आचार्य **शम (निर्वेद)** को भी नवम स्थायी भाव के रूप में स्वीकार करते हैं।*

*इस प्रकार विभावादि के संयोग से परिपक्व स्थायी भाव ही मनुष्यों में अभिव्यक्त होकर रसास्वादन योग्य होने के कारण 'रस' कहलाता है। आचार्य धनञ्जय कृत **'दशरूपकम्'** नामकनाट्यशास्त्रीय ग्रन्थ में रस के विषय में इस प्रकार कहा गया है–*

विभावैरनुभावैश्च सात्त्विकैर्व्यभिचारिभिः।
अनीयमानः स्वाद्यत्वं स्थायी भावो रसः स्मृतः।।[14]

स्थायी भाव को अनेक प्रकार का माना गया है। क्योंकि विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भावों के संयोग से अभिव्यक्त स्थायी भाव ही रस कहलाता है, अतः स्थायी भाव की जो संख्या होगी, वही रसों की संख्या भी होगी। आचार्य भरतमुनि ने आठ स्थायी भाव और आठ ही रस स्वीकार किए हैं।उनके अनुसारशृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स तथा अद्भुत ये आठ रस हैं जिनके रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा तथा विस्मय ये स्थायी भाव होते हैं।

शृंगारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः।
वीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः।।[15]
रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभावः प्रकीर्तिताः।।[16]

सन्दर्भ

1. *सर्वदर्शन विमर्शः – शिवाजी उपाध्याय, वाराणसी*
2. *समकालीन भारतीय दर्शन– लक्ष्मी सक्सेना, लखनऊ*
3. *संस्कृत साहित्य का इतिहास– श्री वाचस्पति गैरोला, वाराणसी*
4. *सांख्य तत्त्व कौमुदी – डा0 आद्या प्रसाद मिश्र, इलाहाबाद*
5. *सर्वदर्शन संग्रह– मध्वाचार्य, बम्बई*

6. *हरिभक्ति रसामृतसिन्धु– श्रीरूपगोस्वामी, काशी*
7. *पुराणतत्त्व मीमांसा– कृष्णमणि त्रिपाठी, लखनऊ*
8. *पुराण–विमर्श – श्री बलदेव उपाध्याय, वाराणसी*
9. *पुराण परिचय– नागशरण सिंह, दिल्ली*
10. *महाभागवत पुराणम्– पुष्पेन्द्र कुमार, दिल्ली*
11. *अमरकोष– अमर सिंह, मुम्बई*